चलना है या नहीं।'

'मेरा जी नहीं चाहता।'

'तो मैं भी न जाऊँ ?'

'मैं आपको कब मना करती हूँ ?'

'फिर 'आप' कहा, ?'

आशा ने जैसे भीतर से जोर लगाकर कहा, 'तुम' और उसका मुखमण्डल लज्जा से आरक्त हो गया।

'हाँ, इसी तरह 'तुम' कहा, करो। तो तुम नहीं चल रही हो ? अगर मैं कहूँ, तुम्हें चलना पड़ेगा ?'

'तब चलूँगी। आपकी आज्ञा मानना मेरा धर्म है।'

लालाजी आज्ञा न दे सके। आज्ञा और धर्म जैसे शब्द उनके कानों में चुभने-से लगे। खिसियाये हुए बाहर को चल पड़े; उस वक्त आशा को उन पर दया आ गयी। बोली, 'तो कब तक लौटोगे ?'

'मैं नहीं जा रहा हूँ।'

'अच्छा, तो मैं भी चलती हूँ।'

जैसे कोई जिद्दी लड़का रोने के बाद अपनी इच्छित वस्तु पाकर उसे पैरों से ठुकरा देता है, उसी तरह लालाजी ने मुँह बनाकर कहा, 'तुम्हारा जी नहीं करता, तो न चलो। मैं आग्रह नहीं करता।'

'आप नहीं, तुम बुरा मान जाओगे।'

आशा गयी, लेकिन उमंग से नहीं। जिस मामूली वेश में थी, उसी तरह चल खड़ी हुई। न कोई सजीली साड़ी, न जड़ाऊ गहने, न कोई सिंगार, जैसे कोई विधवा हो। ऐसी ही बातों पर लालाजी मन में झुँझला उठते थे। ब्याह किया था, जीवन का आनन्द उठाने के लिए, झिलमिलाते हुए दीपक में तेल डालकर उसे और चटक करने के लिए। अगर दीपक का प्रकाश तेज न हुआ, तो तेल डालने से लाभ ? न-जाने इसका मन क्यों इतना शुष्क और नीरस है, जैसे कोई ऊसर का पेड़ हो, कितना ही पानी डालो, उसमें हरी पत्तियों के दर्शन न होंगे। जड़ाऊ गहनों से भरी पेटारियाँ खुली हुई हैं, कहाँ-कहाँ से मँगवाये दिल्ली से, कलकत्ते से। कैसी-कैसी बहुमूल्य साड़ियाँ रखी हुई हैं। एक नहीं, सैकड़ों। पर केवल सन्दूक में कीड़ों का भोजन बनने के लिए। दरिद्र घर की लड़कियों में यही ऐब होता है। उनकी दृष्टि सदैव संकीर्ण रही है। न खा सकें, न पहन सकें, न दे सकें। उन्हें तो खजाना भी मिल जाय, तो यही सोचती रहेंगी कि खर्च कैसे करें। दरिया की सैर तो हुई, पर विशेष आनन्द न आया।

कई महीने तक आशा की मनोवृत्तियों को जगाने का असफल प्रयत्न करके लालाजी ने समझ लिया कि इसकी पैदाइश ही मुहर्रमी है। लेकिन फिर भी निराश न हुए। ऐसे व्यापार में एक बड़ी रकम लगाने के बाद वे उसमें अधिक-से-अधिक लाभ उठाने की वणिक-प्रवृत्ति को कैसे त्याग देते ? विनोद की नयी-नयी योजनाएँ पैदा की जातीं ग्रामोफोन अगर बिगड़ गया है, गाता नहीं, या साफ आवाज नहीं निकलती, तो उसकी मरम्मत करानी पड़ेगी। उसे उठाकर रख देना, तो मूर्खता है। इधर बूढ़ा महाराज एकाएक बीमार होकर घर चला गया था और उसकी जगह उसका सत्रह-अठारह साल का जवान लड़का आ गया था कुछ अजीब गँवार था, बिलकुल झंगड़, उजड्ड। कोई बात ही न समझता था। जितने फुलके बनाता, उतनी तरह के। हाँ, एक बात समान होती। सब बीच में मोटे होते, किनारे पतले। दाल कभी तो इतनी पतली जैसे चाय, कभी इतनी गाढ़ी जैसे दही। इस विजय का डंका पीटे बिना उन्हें कैसे चैन आ सकता था ? जो लोग उनके विवाह के विषय में द्वेषमय टिप्पणियाँ कर रहे थे, उन्हें नीचा दिखाने का कितना अच्छा अवसर हाथ आया है और इतनी जल्दी।

पहले पंडित भोलानाथ के पास गये और भाग्य ठोंककर बोले, 'भई, मैं तो बड़ी विपत्ति में फँस गया। कल से उनके कलेजे में दर्द हो रहा है। कुछ बुद्धि काम नहीं करती। कहती है, ऐसा दर्द पहले कभी नहीं हुआ था।'

भोलानाथ ने कुछ बहुत हमदर्दी न दिखायी। सेठजी यहाँ से उठकर अपने दूसरे मित्र लाला फागमल के पास पहुँचे, और उनसे भी लगभग इन्हीं शब्दों में यह

शोक-सम्वाद कहा। फागमल बड़ा शोहदा था। मुस्कराकर बोला, मुझे तो आपकी शरारत मालूम होती है।

सेठजी की बाँछें खिल गयीं। उन्होंने कहा, 'मैं अपना दुःख सुना रहा हूँ और तुम्हें दिल्लगी सूझती है, जरा भी आदमीयत तुममें नहीं है।'

'मैं दिल्लगी नहीं कर रहा हूँ। इसमें दिल्लगी की क्या बात है ? वे हैं कमसिन, कोमलांगी, आप ठहरे पुराने लठैत, दंगल के पहलवान ! बस ! अगर यह बात न निकले, तो मूँछें मुड़ा लूँ।'

सेठ की आँखें जगमगा उठीं। मन में यौवन की भावना प्रबल हो उठी और उसके साथ ही मुख पर भी यौवन की झलक आ गयी। छाती जैसे कुछ फैल गयी। चलते समय उनके पग कुछ अधिक मजबूती से जमीन पर पड़ने लगे और सिर की टोपी भी न जाने कैसे बाँकी हो गयी। आकृति से बाँकपन की शान बरसने लगी।

जुगल ने आशा को सिर से पाँव तक जगमगाते देखकर कहा, 'बस बहूजी, आप इसी तरह पहने-ओढ़े रहा करें। आज मैं आपको चूल्हे के पास न आने दूंगा।'

आशा ने नयन-बाण चलाकर कहा, 'क्यों, आज यह नया हुक्म क्यों ? पहले तो तुमने कभी मना नहीं किया।'

'आज की बात दूसरी है।'

'जरा सुनूँ, क्या बात है ?'

'मैं डरता हूँ, आप कहीं नाराज न हो जायँ ?'

'नहीं-नहीं, कहो, मैं नाराज न होऊँगी।'

'आज आप बहुत सुन्दर लग रही हैं।'

लाला डंगामल ने असंख्य बार आशा के रूप और यौवन की प्रशंसा की थी; मगर उनकी प्रशंसा में उसे बनावट की गन्ध आती थी। वह शब्द उनके मुख से निकलकर कुछ ऐसे लगते थे, जैसे कोई पंगु दौड़ने की चेष्टा कर रहा हो। जुगल के इन सीधे शब्दों में एक उन्माद था, नशा था, एक चोट थी ? आशा की सारी देह प्रकम्पित हो गयी।

'तुम मुझे नजर लगा दोगे जुगल, इस तरह क्यों घूरते हो ?'

'जब यहाँ से चला जाऊँगा, तब आपकी बहुत याद आयेगी।'

'रसोई पकाकर तुम सारे दिन क्या किया करते हो ? दिखायी नहीं देते !'

'सरकार रहते हैं, इसीलिए, नहीं आता। फिर अब तो मुझे जवाब मिल रहा है। देखिए, भगवान् कहाँ ले जाते हैं।'

आशा की मुख-मुद्रा कठोर हो गयी। उसने कहा, 'कौन तुम्हें जवाब देता है ?'

'सरकार ही तो कहते हैं, तुझे निकाल दूंगा।'

'अपना काम किये जाओ, कोई नहीं निकालेगा। अब तो तुम फुलकेभी अच्छे बनाने लगे।'

'सरकार हैं बड़े गुस्सेवर।'

'दो-चार दिन में उनका मिजाज ठीक किये देती हूँ।'

'आपके साथ चलते हैं तो आपके बाप-से लगते हैं।'

'तुम बड़े मुँहफट हो। खबरदार, जबान सँभालकर बातें किया करो।'

किन्तु अप्रसन्नता का यह झीना आवरण उनके मनोरहस्य को न छिपा सका। वह प्रकाश की भाँति उसके अन्दर से निकला पड़ता था। जुगल ने फिर उसी निर्भीकता से कहा, 'मेरा मुँह कोई बन्द कर ले, यहाँ यों सभी यही कहते हैं। मेरा ब्याह कोई 50 साल की बुढ़िया से कर दे, तो मैं घर छोड़कर भाग जाऊँ। या तो खुद जहर खा लूँ या उसे जहर देकर मार डालूँ। फाँसी ही तो होगी ?'

आशा उस कृत्रिम क्रोध को कायम न रख सकी। जुगल ने उसकी हृदयवीणा के तारों पर मिज़राब की ऐसी चोट मारी थी कि उसके बहुत जब्त करने पर भी मन की व्यथा बाहर निकल आयी। उसने कहा, 'भाग्य भी तो कोई वस्तु है।'

'ऐसा भाग्य जाय भाड़ में।'

'तुम्हारा ब्याह किसी बुढ़िया से ही करूँगी, देख लेना !'

'तो मैं भी जहर खा लूँगा। देख लीजिएगा।'

'क्यों बुढ़िया तुम्हें जवान स्त्री से ज्यादा प्यार करेगी, ज्यादा सेवा करेगी। तुम्हें सीधे रास्ते पर रखेगी।'

'यह सब माँ का काम है। बीवी जिस काम के लिए है, उसी काम के लिए है।'

'आखिर बीवी किस काम के लिए है ?'

मोटर की आवाज आयी। न-जाने कैसे आशा के सिर का अंचल खिसककर कंधो पर आ गया। उसने जल्दी से अंचल खींचकर सिर पर कर लिया और यह कहती हुई अपने कमरे की ओर लपकी कि 'लाला भोजन करके चले जायँ, तब आना।'